Research Guru
Online Journal of Multidisciplinary Subjects (ISSN : 2349-266X)
UGC Approved Journal No. 63726
Impact Factor:3.021 website: www.researchguru.net
Volume-12, Issue-1, June-2018

पूर्व मध्यकाल में कृषि व्यवस्था : एक सर्वेक्षण

हिमांशु सिंह
प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्त्व विभाग,लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
ई–मेल : himanshusingh1611@gmail.com

सारांश :–

भारत में कृषि का साक्ष्य प्राचीन काल से प्राप्त होता हैं। अगर पूरी दुनिया की बात की जाय तो कृषि का प्रारम्भ 8000 ई0 पूर्व माना हैं। जो प"िचमी ए"िाया के आस पास हमको प्राप्त होता होता हैं। भारत में कृषि का प्रारम्भ प्राग्हड़पाई नवपाषाण संस्कृति में हमको प्राप्त होता हैं। यह स्थान जहा से कृषि का साक्ष्य प्राप्त हैं, वह दक्षिणी बलूचिस्तान का मेहरगढ़ नामक स्थान हैं। जो भारत में प्राचीनतम् कृषि के साक्ष्य के रुप में मिला हैं। भारत में सबसे पहले जौ और गेहूॅ के खेती के साक्ष्य प्राप्त होते हैं अर्थात् मानव द्वारा प्रथम अन्न उपजाने की बात करे तो जौ (यव) का स्थान आता हैं।

<u>की वर्ड–</u>

–सीता (कूड़ः–जो हल से जोतने पर लाइन बनती हैं।)
–वार्ता (प"ाुपालन+कृषि+व्यापार)
–वास्तुक (वथुआ–जिसे साग के रूप में प्रयोग किया जाता हैं।)
–हल; फाल; कुदाल; ओखल

भारत में कृषि का साक्ष्य बहुत ही प्राचीनकाल से प्राप्त होता है। अगर पूरी दूनिया की बात की जाए तो कृषि का साक्ष्य 8000 ई0पू0 पुरानी है और भारत में कृषि का स्तर 5000 ई0पू0 पुराना है। इस प्रकार कृषि के अध्ययन का इतिहास बड़ा ही लम्बा है। कुछ विद्वानों का मत है कि सबसे पहले गेहूँ की खेती के अवशेष मुण्डिगक में मिले हैं, यह स्थान अफगानिस्तान के दक्षिण पूर्वी भाग में स्थित है। खाद्य उत्पादन की बात भारतीय स्तर पर किया जाए तो पहला निश्चित साक्ष्य 5000 ई0पू0 के आस–पास उत्तर–पश्चिम क्षेत्र के बलूचिस्तान में मिलता है।[1] इस सम्बन्ध में हमको यह बात नहीं भूलनी चाहिए कि मानव ने जब पहली बार कृषि करना शुरू किया होगा तो उसने अपनी खेती जंगलों से शुरू किया होगा अर्थात्

1. ओमप्रकाश, प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, चतुर्थ संस्कारण, नई दिल्ली, 1997, पृ0 3 (द्वितीय खण्ड)

किसी भी फसल का पूर्वज यह माना जा सकता है कि वन्य फसल होता है। भारत में स्पष्ट कृषि का जो पुरातात्विक साक्ष्य मिलता है वह सिन्ध और बलूचिस्तान की सीमा पर बेलन नदी के किनारे मेहरगढ़ नामक स्थान से प्राप्त होता है। यहाँ से गेहूँ और जौ की किस्म प्राप्त हुई हैं।[2] कश्मीर के बुर्जहोम से कृषि के साक्ष्य 2500 ई0पू0 के आस–पास गेहूँ और जौ के साक्ष्य मिलते हैं। उत्तर प्रदेश में बेलन घाटी में भी कृषि के प्राचीन साक्ष्य प्राप्त हुए हैं। हड़प्पा सभ्यता का अध्ययन करने पर पता चलता है कि इस सभ्यता विकास के आरम्भ से पहले ही कृषि का विकास हो चुका था। तीसरी शताब्दी ई0पू0 के आरम्भ से ही कृषि सिन्धु घाटी में सिन्ध और पंजाब दोनों जगहों पर दूर–दूर तक प्रचलित हो गया और कुछ समय बाद यह सरस्वती नदी की घाटी में भी कृषि उत्पादन होने लगा था।

प्राचीन भारत का आर्थिक इतिहास का अध्ययन करने वाले इतिहासकारों का मत है कि ऋग्वैदिक काल तक कृषि का पूर्ण विकास हो चुका था। कृषि ऋग्वैदिक आर्यों का प्रमुख व्यवसाय था इसीलिए उन्होंने वर्षा के लिए अनेक प्रार्थनाएँ और भूमि को उपजाऊ बनाने के लिए नदियों से प्रार्थना की है।[3] परन्तु कुछ विद्वान इसका खण्डन करते हैं और इन्होंने आर्यों का प्रमुख व्यवसाय पशुपालन को माना है।[4] धीरे–धीरे जैसे समय आगे की तरफ बढ़ता गया, कृषि का क्षेत्र भी विस्तृत होता गया । सूत्त साहित्य में कृषि सम्बन्धी जानकारी हमको प्राप्त होती है, जैसे बैलों से हल जोतने, बीज बोने और सीता (कूँड) को पूजने के लिए अनेक धार्मिक क्रियाएँ करने के विधान दिए गए हैं। बौद्ध ग्रन्थों में भी कृषि सम्बन्धी जानकारी प्राप्त होती है। दीर्घनिकाय में कृषकों की सहायता करने वाले पर बल दिया गया है।[5] इस समय कृषि में लगभग लोहे का प्रयोग किया जाने लगा था। लोहे के अविष्कार से कृषि जगत में क्रान्तिकारी परिवर्तन आया और कृषि का विकास तेजी से बढ़ा। हल के फाल लोहे के बनाये जाने लगे जिससे कठोर और सख्त जमीन पर भी खेती की जाने लगी, जिससे बंजर भूमि पर भी खेती करना आसान हो गया।

कौटिल्य ने भी कृषि का उल्लेख किया है। कौटिल्य ने पशुपालन, कृषि और व्यापार के लिए एक शब्द 'वार्ता' का प्रयोग किया है।[6] कौटिल्य ने कृषि को अन्य व्यवसायों से श्रेष्ठ माना है क्योंकि इससे मिलने वाले लाभ निश्चित हैं। यह कहता है कि वे राज्य अच्छे हैं जहाँ की पर्याप्त भूमि जो कृषि कार्य करने लायक हो, जहाँ

---

2. वही, पृ0 3
3. ओमप्रकाश, प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, चतुर्थ संस्कारण, नई दिल्ली, 1997, पृ0 4
4. कृष्णमोहन श्रीमाली, वैदिक साहित्य में प्रतिबिम्बित भारत, पृ0 123
5. दीर्घनिकाय, 1/135 तथा आगे
6. ओमप्रकाश, प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, चतुर्थ संस्कारण, पृ0 8 (द्वितीय संस्करण)

वन एवं पानी हो क्योंकि वही राज्य शक्तिशाली है।[7] मनु एवं पतंजलि ने भी कृषि सम्बन्धित वर्णन दिया है। उन्होंने कृषि सम्बन्धित उपकरणों का वर्णन किया है। जिसमें हल, फाल, कुदाल, फावड़ा, हंसिया, शूर्प, मूसल एवं ओखली का उल्लेख मिलता है।[8] कौटिल्य के अर्थशास्त्र के माध्यम से यह भी पता चलता है कि कृषि से राजकोष में वृद्धि होती है। अतः राज्य एवं ग्रामों के अन्दर नाट्यगृह, क्रीड़ास्थल, नर्तक, गायक, वादक आदि का निवास नहीं होना चाहिए क्योंकि इसके होने से कृषक को कृषि कार्य करने में बाधा पड़ेगी। [9] अर्थशास्त्र के साथ–साथ मनु ने भी कृषि के महत्व को बताया है। मनु ने जीवन निर्वाह के दस साधनों में कृषि को आठवाँ स्थान दिया है। कृषि को बाधा पहुँचाने या किसी भी प्रकार से हानि पहुँचाने पर कठोर दण्ड का विधान भी बताया है। मनु एवं पतंजलि ने भी कृषि उपकरणों का भी वर्णन किया है। बराहमिहिर एवं कालिदास ने भी कृषि को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। जहाँ कृषि को बराहमिहिर ने वार्ता (कृषि, पशुपालन एवं व्यापार) में शामिल किया है।[10] वहीं कालिदास कृषि को राष्ट्रीय समृद्धि का प्रमुख साधन मानते हैं।[11] अमरकोष में भी खेती के दो नामों का प्रमाण प्राप्त है। इसमें कृषि यन्त्रों का भी वर्णन प्राप्त होता है।

जिस प्रकार समय बढ़ता गया वैसे–वैसे समय के साथ परिवर्तन और उतार–चढ़ाव होता गया। पूर्वमध्यकाल तक कृषि का विस्तार और भी बढ़ गया, सामंतीय प्रथा का प्रचलन बढ़ा, नगरों का पतन होता गया, व्यावसायिक संगठनों की संख्या में कमी आती गयी, कम संख्या में सिक्कों को जारी किया जाने लगा आदि कारणों से व्यापार आदि कार्यों में कमी आयी। जिसका प्रभाव ये पड़ा कि कृषि पर पड़ने वाला दबाव बढ़ गया। कामन्दक और सोमदेव के विचारों से कृषि के महत्त्व का पता चलता है। कामन्दक के अनुसार जो व्यक्ति वार्ता अर्थात् पशुपालन, कृषि और व्यापार में निपुण हो वह कभी निर्धन नहीं रह सकता।[12] अर्थात् वह व्यक्ति विश्व का सबसे धनी व्यक्ति है। सोमदेव ने भी भूमि की प्राप्ति सोने की प्राप्ति के बराबर बताया है। कृषि को धनोपार्जन का प्रमुख साधन के रूप में जाना जाने लगा और यह जीवन निर्वाह का आधार बन गया। जब पूर्वमध्यकाल के साक्ष्यों का अध्ययन किया जाता है तो कृषि मेलों के भी विवरण प्राप्त होते हैं।[13] इन मेलों में कृषि सम्बन्धित देवताओं के पूजन का भी वर्णन मिलता है। इस काल में कृषि करने

---

7. कौटिल्य अर्थशास्त्र, 6/1
8. मनु, 2/218, महाभाष्य, 11/1/32
9. रघुवंश, 16/2
10. वृहत्संहिता, 19/11
11. रघुवंश, 16/2
12. कामन्द, 12
13. नीलमतपुराण, श्लोक 696–97

का अधिकार चारों वर्णों को था। लेकिन मुख्यतः वैश्व कृषि कार्यों को करते थे। मेधातिथि में इस बात का वर्णन मिलता है कि वैश्य को इस बात की जानकारी होनी चाहिए कि खेती में बीज को कैसे रोपना है, कैसी मिट्टी में कौन सी फसल होगी और खेती के बीज से कितना अन्न का उत्पादन होगा।[14] मेधातिथि ने कृषि, सिंचाई, जंगल को साफ करना एवं भूमि को कृषि योग्य बनाना, लोगों को बसाना यह राजा के मुख्य कार्यों में शामिल किया है।[15]

कृषि को भूमिदानों ने भी बढ़ाया। अनेक ब्राह्मण भू–स्वामी एवं जमींदार हो गए। इसीलिए पूर्वमध्यकाल के कुछ लेखकों ने कृषि को सभी वर्णों के लिए सामान्य धर्म मान लिया था। ब्राह्मण को भी राज्य के लिए कर देने की सलाह दी गयी और दान करने की बात कही गयी है। सिद्धर्षि ने भी राजा को यह सलाह दिया है कि राजा को भी वार्ता, कृषि एवं पशुपालन का ज्ञान लेना चाहिए और राजा को भी सीखना चाहिए।[16] जिनसेन ने भी राजा को कृषि के लिए एक सलाह देते हुए कहा है कि राजा को आलस्य छोड़कर किसानों को बीज की उचित व्यवस्था करानी चाहिए जिससे कृषि हो सके तथा कृषकों से न्यायोचित कर भी लेना चाहिए। ऐसे कार्य जो राजा करते हैं उसकी शक्ति में बढ़ोत्तरी होती है।[17] जिनसेन का कहने का तात्पर्य यह है कि राजा को कृषक के पक्ष में कार्य करना चाहिए जिससे अन्न की उपज अच्छी हो और राज्य की आय में बढ़ोत्तरी हो सके।

पूर्वमध्यकाल में बाहरी आक्रमण भी होते रहे हैं। जिसके साथ आये लेखकों ने भी कृषि की उत्तम व्यवस्था की बात कही है। अरबी लेखकों ने भारत की भूमि की बहुत ही प्रशंसा की है और भारत की भूमि को बहुत उपजाऊ बताया है।[18] शुक्र ने राजा को आपातकाल के लिए अनाज को रखने के लिए सलाह देते हुए कहा है कि जो अनाज पूर्ण रूप से पका हो, चमकीला, अच्छे से सूखे, अच्छे स्वाद वाला, सुगन्धित और अच्छा हो उसको राजा को अपने भण्डारगृह में रखना चाहिए, जिससे वह लम्बे समय तक रह सके जो आगे खाद्यान्न के रूप में प्रयोग हो सके।[19] मेधातिथि और काव्यमीमांसा ने ईख की प्रशंसा करते हुए कृषकों से इसकी खेती करने की सलाह दी है। कृषि के अन्य वस्तुओं में कपूर और अगर का भी उल्लेख मिलता है। अन्न के साथ–साथ फल का भी उल्लेख मिलता है जिसमें नारंगी, अंगूर, खजूर, नारियल, आम, केला, कटहल आदि फलों का भी उल्लेख मिलता

14. मेधातिथि, मनु, 8.320 पर
15. मनु, 7/154 पर मेधातिथि की टीका
16. उपमिति, भाग 1, पृ0 5
17. जैन आदिपुराण, 42/176
18. इलियट और डाउसन, 1, 15–16, 24, 27–28, 35, 37–40
19. शुक्रनीतिसार, 4, 2, 27–29

है।[20] फल के साथ–साथ साग और सब्जी का भी कृषि कार्य करने का उल्लेख प्राप्त होता है। जिसमें मूली, बैंगन, प्याज, ककड़ी आदि की खेती के प्रमाण हमको प्राप्त होते हैं।[21] साग के रूप में वास्तुक (बथुआ), राटी, पाठा विशेष रूप से से खाया जाता था।[22] सरसों का साग भी खाया जाता था। अर्थात् सरसों की खेती होती थी। उपज को अधिक करने के लिए खेतो में खाद का भी प्रयोग किया जाता था। अग्निपुराण एवं शारंगधरकृत उपवन विनोद में खादों तथा उनके प्रयोग के बारे में विवरण प्राप्त होता है।[23] खाद के प्रयोग का विवरण हर्ष ने भी किया है। हर्षचरित से भी यह पता चलता है कि कृषक बंजर पड़ी भूमि को भी खाद का प्रयोग करके उसको उपजाऊ बनाते थे। इस खाद को वह बैलगाड़ी से लादकर खेतों तक ले जाते थे।[24] मध्ययुगीन कोषग्रंथ पर्यायमुक्तावली में अन्न की विस्तृत सूची प्राप्त होती है जिसमें गेहूँ, जौ, तिल, दालों आदि का विवरण प्राप्त होता है जिसका तात्पर्य यह है कि इसको उपजाया जाता था। इसी प्रकार बहुत यात्री एवं विद्वानों ने भी कृषि सम्बन्धित विवरण दिए हैं, जैसे मार्कोपोलो ने बंगाल में कपास के उत्पादन की बात कही है। अदरक और दालचीनी का उत्पादन पाण्ड्य राज्य में ज्यादा होने की बात करता है।[25] इस समय गुजरात कपास की खेती तथा नील की खेती के लिए प्रसिद्ध थे।

निष्कर्ष

इस प्रकार इस काल में खेती का बहुत ही विकास हुआ। यह विकास इस बात से स्पष्ट होता है कि ग्यारहवीं शताब्दी में अनेक ग्रन्थों की रचना हुई जिसमें कृषिपरासर तथा वृक्ष्यायुवेद नामक दो ग्रन्थ मुख्य थे। जिसमें कृषि करने तथा वृक्ष लगाने के उपाय सुझाए गए। पूर्वमध्यकाल में बाहर से आने वाले आक्रमणकारियों ने अपने–अपने ढंग और तरीकों को भी भारत तक पहुँचाया। जिससे कृषि के तौर–तरीकों में वृद्धि हुई। उनके उपकरणों के उपयोग से भी कृषि कार्य में वृद्धि हुई। उनके साथ आने वाले विद्वानों, लेखकों और यात्रियों के द्वारा भी कृषि के बारे में जानकारी मिलती है। यह कृषि के तौर–तरीके जो भारत से बाहर होते थे उसकी जानकारी भी भारतीयों को दी गयी जिसका लाभ भारतीय कृषक भी उठा सके और उठाया भी। प्रसिद्ध लेखक और इतिहासकार आर एस शर्मा ने पूर्वमध्यकाल के कृषि का विवरण देते हुए बताते हैं कि इस समय का मूलाधार कृषि ही थी। इस समय व्यापार–वाणिज्य बहुत कम हो गया था। 600 ई0 तथा 1000 ई0 के बीच के काल

---

20. उपमिति, 585
21. मानसोल्लास 3, 1555–1564
22. क्षीरस्वामी अमर, 165 पर
23. यादव पूर्वोद्धत, पृ0 257
24. अग्रवाल, हर्षचरित, पृ0 183
25. मार्कोपोलो, ट्रेवेल्स 2, पृ0 115

में कृषि का विकास हुआ और जो नगर व्यापार पर आधारित थे उनका विनाश हुआ। इसका सबसे बड़ा कारण सामंतीय व्यवस्था का बढ़ता विकास था। जिस सामंतीय व्यवस्था ने जमींदारी प्रथा में बढ़ोत्तरी कर दी। इस काल की कृषि को वैज्ञानिक आधार प्रदान किया गया और कृषिशास्त्र में अद्‌भुत बढ़ोत्तरी हुयी। समय के साथ–साथ कृषि में भी परिवर्तन होते गये। पूर्वमध्य काल में सामंतीय प्रथा का प्रचलन जैसे–जैसे बढ़ता गया वैसे–वैसे कतिपय नगरों के पतन और व्यापार करने वाले संगठनों के प्रभाव में भी कमी आती गयी। सिक्कों के बहुतायत कम जारी होने के कारण वाणिज्य और व्यापार में लगातार गिरावट आयी। इस प्रकार पतन के कारण कृषि पर होने वाले दबाव में अभूतपूर्व वृद्धि हुयी पूर्व के कालों में मुख्य रुप से वै"य ही कृषि के कार्य में संलग्न थे और उनका व्यवसाय भी था। शुद्र भी विभिन्न कृषि कार्य कर सकते थे। ब्राहाम्ण तथा क्षत्रिय को आपत्तिकाल में कृषि करने की अनुमति दी गयी थी। परन्तु भूमिदान के परिणाम स्वरुप अनेक बाहम्ण भूस्वामी एवं जमींदार हो गये। पूर्वमध्य काल के कुछ लेखकों ने तो कृषि को सभी वर्णो के लिये एक सामान्य धर्म (व्यवसाय) मान लिया। पूर्वमध्य में कृषि को वैज्ञानिक आधार प्रदान किया गया और कृषि के सम्बन्ध में कई ग्रन्थों की रचना भी की गयी। एक रचना वृक्षायुर्वेद नामक ग्रन्थ (10वीं सदी) में पौंधा कैसे लगाया जाये और उसे बिमारियों से कैसे बचाया जाये उसका उल्लेख करता है। इस समय नगदी फसल होने का भी उल्लेख मिलता है, जिसमें कपास,सुपारी,गन्ना एवं गर्म मसाले प्रमुख रुप में आये। इस प्रकार पूर्वमध्यकाल में कृषि का विकास बहुत ही उन्नत"ील अवस्था में देखने को मिलता है।